स्वभाषा की सामर्थ्य पहचानने का समय

बद्री नारायण

जब हमारे प्रशासक अपनी भाषा में सोचेंगे तभी वे जनता के लिए मौलिक योजनाएं बना सकते हैं और तभी उन योजनाओं से व्यापक जन को सर्वाधिक लाभ हो सकेगा

केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक हिंदी साहित्यकार होने के साथ ही हिंदी में ज्ञान चिंतन के भी प्रबल पक्षधर हैं। हिंदी के प्रति उनका लगाव बार-बार अभिव्यक्त होता रहता है। बीते दिनों संसद में नई शिक्षा नीति के जरिये वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में हर हाल में आमूलचूल बदलाव की घोषणा करते हुए उन्होंने कहा कि मातृ भाषा का सम्मान किए बिना कोई भी देश प्रगति नहीं कर सकता। उन्होंने इस संबंध में भ्रम फैलाने की आलोचना करते हुए यह भी कहा कि नई शिक्षा नीति में सभी भारतीय भाषाओं को सम्मान ही नहीं, बल्कि हर कीमत पर उन्हें सशक्त बनाकर देश की प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया जाएगा।

वह हिंदी को मात्र भाषा नहीं, बल्कि संस्कृति मानते रहे हैं। हिंदी को गवर्नेंस की भाषा के रूप में उभारने के लिए भी वह काफी उत्सुक दिखते हैं। उनके इस भाव से कई महत्वपूर्ण सवाल उठते हैं जो भारतीय समाज एवं राष्ट्र के लिए व्यापक विमर्श खड़ा करते हैं। हम जैसे जो लोग समाज विज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत हैं वहां ज्ञान एवं विमर्श की भाषा अभी भी मुख्यतः अंग्रेजी है। अंग्रेजी से किसी को कोई एतराज नहीं है। अंग्रेजी भाषा शक्ति का उपयोग भी भारतीयों की शक्ति बढ़ाता है, लेकिन हिंदी में ज्ञान एवं चिंतन को प्रोत्साहन देना आज की बड़ी जरूरत है।

आत्मभाषा में ही आत्मज्ञान या स्वज्ञान का विकास संभव है। केन्या के प्रसिद्ध उपन्यासकार अंगुगीबाथ्योगें ने 'डिकालोनाइजिंग माइंड' नाम से एक बेहद महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी है। इसमें वह आत्म मुक्ति का रास्ता अपनी भाषा को मानते हैं। आत्म मुक्ति का तात्पर्य सोचने, समझने, कहने और सुनने के स्वराज की प्राप्ति से है और यह अपनी भाषा में ही संभव हैं। भारतीय समाज में विकास की पहली जरूरत है कि सोचने, समझने एवं विभिन्न कार्यों को करने के लिए औपनिवेशिक परिवेश से मुक्त मनो-मस्तिष्क का विकास, जिसे हमने अंग्रेज उपनिवेशवाद की हमारी अस्मिता में गहराई तक प्रवेश के कारण खो दिया है। इसे किसी भी हाल में पुराने ढर्रे पर वापस लाना ही होगा। हालांकि उसके लिए वापसी की यह प्रक्रिया उतनी आसान नहीं है। इसे संभव बनाने के लिए हमें आत्म-विस्मृति के दंश से निकलना होगा। औपनिवेशिकता की गुलामी में जकड़े देश आमतौर पर 'आत्म विस्मृति' के शिकार रहे हैं। उनकी आजादी की एक बड़ी लडाई 'आत्म विस्मृति' से मुक्ति की लड़ाई रही है।

असल में होता यह है कि हमें नीतियां उनके लिए बनानी हैं और उस समाज का विकास करना है जो अंग्रेजी नहीं जानता। वह तबका अपनी भाषा में सोचता है और वही उसकी आकांक्षाओं की भाषा है। ऐसी जनता के लिए नीतियां बनाने वालों की सोचने-समझने की भाषा अभी भी अंग्रेजी है। ऐसे में नीतियों, विकास के परिप्रेक्ष्य एवं विकास के लिए जरूरतमंद समूह के बीच एक खाई चौड़ी हो जाती है। हमें जरूरत इस बात की है कि हम जनता की आकांक्षा की भाषा के साथ स्वयं को जोड़ें। हिंदी क्षेत्र की जनता के लिए तो हिंदी उनके विकास, प्रशासन एवं चिंतन की भाषा होकर ही उन्हें सतत एवं सर्वांगीण विकास से जोड़ सकती है।

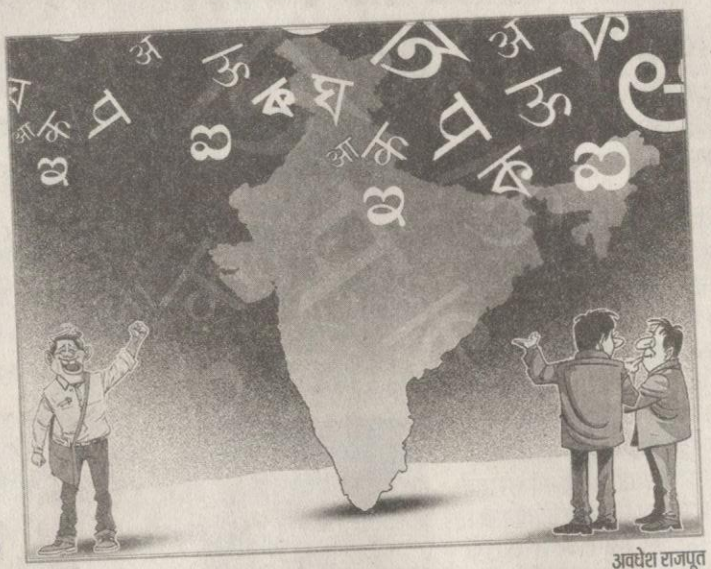

अवधेश राजपूत

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषी समाज के बीच संवाद बढ़ रहा है। संभव है कि आने वाले दिनों में कोई उड़िया भाषा भाषी अपनी आकांक्षाएं तो उड़िया भाषा में जाहिर करे, लेकिन उनका संप्रेषण हिंदी में करे। हालांकि हिंदी अपने विकास के लिए किसी सरकारी प्रयास की मोहताज नहीं है, लेकिन यदि भारत सरकार का मानव संसाधन विकास मंत्रालय हिंदी को ज्ञान, चिंतन, विकास एवं प्रशासन की भाषा बनाने के लिए अगर कोई कदम उठाए तो हमें उसका स्वागत करना चाहिए। हिंदी के साथ एक बड़ी खूबी यह है कि वह मल्टी फंक्शन की भाषा हैं। एक ही साथ वह भारत के एक बड़े समाज की अस्मिता से जुड़ी भाषा है। दूसरी ओर वह बहुभाषीय भारतीय समाज में संप्रेषण की भाषा का रूप ले रही है। वह एक बड़े बाजार की भाषा भी है। शायद इसीलिए इंग्लिश आज हिंग्लिश यानी हिंदी और अंग्रेजी का मिला-जुला रूप बनने के लिए मजबूर है। तीसरी बात यह है कि हिंदी भारतीय समाज में आर्थिक जीवन प्रक्रिया का हिस्सा है। समस्या सिर्फ यह है कि राज भाषा होने के बावजूद भारतीय राज्य की कार्य प्रक्रिया में हिंदी सर्वाधिक उपेक्षित भाषा के रूप में है। वह एक खानापूर्ति की भाषा बनकर रह गई है।

भारतीय नौकरशाही एवं शासक समूह का एक बड़ा हिस्सा आज भी अंग्रेजीदां है जबकि आम जनमानस को ऐसी नौकरशाही की दरकार है जो उसकी भाषा में योजनाएं बना सके। उसकी भाषा में उससे संवाद करे और यह तभी संभव है जब हमें हमारे मानस का स्वराज्य प्राप्त होगा। जब हमारे प्रशासक आत्म भाषा में सोचेंगे तभी वे अपनी जनता के लिए मौलिक योजनाएं बना सकते हैं और तभी उन योजनाओं से व्यापक जन को सर्वाधिक लाभ हो सकेगा।

इस प्रकार भाषा सिर्फ संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि अस्मिता, संस्कृति से जुड़ने और मानसिक गुलामी से स्वयं को मुक्त करने का माध्यम भी है। मानसिक गुलामी से मुक्ति नए भारत के निर्माण का आधारभूत तत्व है। 'मानसिक गुलामी से मुक्ति' की प्रक्रिया एक लंबी प्रक्रिया है जिसमें 'स्वभाषा' की बड़ी भूमिका होती है। स्वभाषा की शक्ति हमें तभी मिलेगी जब औपनिवेशिक भाषा द्वारा सृजित 'हीन भावना' से हम मुक्त हो पाएंगे।

आज एक तरफ गांव-गांव में कान्वेंट स्कूल खुल रहे हैं तो दूसरी ओर हमारे सरकारी स्कूलों की शृंखला कमजोर होती जा रही है जहां से हमें हिंदी माध्यम में पढ़ने और सोचने की शिक्षा मिलती थी। ऐसे में यह जरूरी है कि केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय अन्य भारतीय भाषाओं को सम्मान देने के साथ ही हिंदी माध्यम में सोचने, पढ़ने, लिखने एवं परिकल्पना करने वाली शिक्षा-प्रणाली को प्राथमिकता दे।

पूरी दुनिया के विकसित मुल्कों का एक बड़ा हिस्सा गैर-अंग्रेजी भाषी होने के साथ-साथ आत्म भाषा में अपने ज्ञान एवं विकास की गतिकी को सृजित एवं प्राप्त कर रहा है। ऐसे में विकसित हो रहा भारतीय राष्ट्र जब स्वभाषा में अपनी शक्ति की मौलिक कल्पना करेगा तभी उसे उसके विकास की सच्ची गतिकी प्राप्त हो सकेगी। हिंदी पट्टी के विकास की पहली शर्त ही है कि स्वभाषा में उसके वजूद को परिकल्पित किया जाए। तभी हिंदी के महत्वपूर्ण कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की यह कामना पूरी हो सकेगी-'शक्ति की करो मौलिक कल्पना।' ध्यान रहे कि यह कल्पना ही औपनिवेशिकता से प्रताड़ित भारत के बरक्स नया एवं अपना भारत विकसित कर सकेगी। यह अपना भारत ही भविष्य का भारत हो सकेगा।

(लेखक गोविंद बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान, प्रयागराज के निदेशक हैं)
response@jagran.com

संसद में संसाधनों की बर्बादी

जताई। लोगों का गुस्सा बढ़ता देखकर विपक्ष विरोध करना